अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक1, जनवरी - मार्च 2025

दलित विमर्श और हिन्दी साहित्य: एक आलोचनात्मक समीक्षा

डॉ. सोनिया

सहायक प्रोफेसर, हिंदी विभाग, गौड़ ब्राह्मण डिग्री कॉलेज, रोहतक

सार

भारतीय समाज की संरचना ऐतिहासिक रूप से वर्ण–व्यवस्था, जातिगत असमानता और सामाजिक विभाजन पर आधारित रही है। इस संरचना में दलित वर्ग सदियों से सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक उत्पीड़न का शिकार रहा है। दलित विमर्श इसी उत्पीड़न के विरुद्ध चेतना, प्रतिरोध और आत्मसम्मान की वैचारिक प्रक्रिया है। हिन्दी साहित्य में दलित विमर्श का उदय केवल साहित्यिक घटना नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की सशक्त अभिव्यक्ति है। प्रस्तुत समीक्षा-लेख का उद्देश्य दलित विमर्श की अवधारणा, उसके सैद्धान्तिक आधार, सामाजिक पृष्ठभूमि तथा हिन्दी साहित्य में उसके विकास की आलोचनात्मक विवेचना करना है। यह लेख यह स्पष्ट करता है कि दलित विमर्श केवल जाति-आधारित पीड़ा का आख्यान नहीं, बल्कि मानव-मूल्यों, समानता, स्वतंत्रता और न्याय की स्थापना का साहित्यिक संघर्ष है।

कुंजी शब्द: दलित विमर्श, हिन्दी साहित्य, सामाजिक न्याय, अम्बेडकरवाद, अस्मिता, प्रतिरोध, जाति-व्यवस्था

1. भूमिका: दलित विमर्श की पृष्ठभूमि

भारतीय समाज की ऐतिहासिक संरचना असमानता, ऊँच-नीच और जातिगत विभाजन पर आधारित रही है। वर्ण-व्यवस्था ने समाज को चार वर्गों—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—में विभाजित किया, जिसमें शूद्र और अतिशूद्र वर्ग को सामाजिक अधिकारों से वंचित रखा गया। यही वर्ग आगे चलकर 'दलित' के रूप में पहचाना गया।

दलित शब्द का अर्थ केवल दबा हुआ या कुचला हुआ व्यक्ति नहीं है, बल्कि वह समुदाय है जिसे सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक और सांस्कृतिक रूप से व्यवस्थित ढंग से हाशिये पर रखा गया। दलितों को शिक्षा, संपत्ति, सत्ता और सम्मान से वंचित कर दिया गया। इस दमन के विरुद्ध जो चेतना विकसित हुई, वही आगे चलकर **दलित विमर्श** के रूप में सामने आई।

दलित विमर्श केवल साहित्यिक आंदोलन नहीं है, बल्कि सामाजिक क्रांति का वैचारिक स्वरूप है। हिन्दी साहित्य में इसका प्रवेश देर से हुआ, परंतु जब हुआ तो उसने साहित्य की परंपरागत सौंदर्य-दृष्टि, विषय-वस्तु और मूल्य-बोध को चुनौती दी।

2. 'दलित' शब्द की अवधारणा

'दलित' शब्द संस्कृत की धातु 'दल्' से बना है, जिसका अर्थ है—दबा हुआ, कुचला हुआ, शोषित। परंतु आधुनिक संदर्भ में यह शब्द केवल पीड़ा का संकेत नहीं, बल्कि संघर्ष और प्रतिरोध का प्रतीक है।

महात्मा गांधी ने दलितों के लिए 'हरिजन' शब्द का प्रयोग किया, किंतु दलित चिंतकों ने इसे अस्वीकार कर दिया क्योंकि इसमें करुणा तो थी, समानता नहीं। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने स्पष्ट किया कि दलित वह वर्ग है जिसे समाज ने जानबूझकर अछूत बनाया है और जिससे मानवाधिकार छीने गए हैं।

दलित विमर्श में 'दलित' शब्द आत्मसम्मान, चेतना और अधिकार की पहचान बनकर उभरता है। यह शब्द अब किसी वर्ग विशेष की हीनता नहीं, बल्कि सामाजिक अन्याय के विरुद्ध आवाज़ है।

3. भारतीय सामाजिक संरचना में दलित

भारतीय समाज में दलितों की स्थिति अत्यंत दयनीय रही है। उन्हें मंदिर प्रवेश, शिक्षा, जल-स्रोतों के उपयोग और सम्मानजनक जीवन से वंचित रखा गया। छुआछूत जैसी अमानवीय प्रथाएँ दलितों के जीवन का हिस्सा रहीं।

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक1, जनवरी - मार्च 2025

साहित्य लंबे समय तक इस यथार्थ से मुँह मोड़े रहा। संस्कृत और मध्यकालीन साहित्य में दलितों का चित्रण या तो अनुपस्थित रहा या नकारात्मक। उन्हें हास्य, करुणा या तिरस्कार का पात्र बनाया गया। यह साहित्य सवर्ण दृष्टिकोण से लिखा गया था, जिसमें दलित अनुभवों के लिए कोई स्थान नहीं था।

आधुनिक काल में सामाजिक सुधार आंदोलनों ने दलित चेतना को स्वर दिया। ज्योतिबा फुले, सावित्रीबाई फुले और विशेष रूप से डॉ. अम्बेडकर ने दलितों को आत्मसम्मान और अधिकारों के लिए संगठित किया।

4. दलित विमर्श: अर्थ और स्वरूप

दलित विमर्श का अर्थ है—दलित समाज के जीवन, संघर्ष, पीड़ा, चेतना और प्रतिरोध का साहित्यिक एवं वैचारिक अभिव्यक्तिकरण। यह विमर्श मुख्यधारा के साहित्य से भिन्न है क्योंकि इसका दृष्टिकोण दलित स्वयं का होता है, न कि उनके बारे में किसी अन्य का।

दलित विमर्श की प्रमुख विशेषताएँ हैं—
- यथार्थ की निर्भीक अभिव्यक्ति
- आत्मकथात्मक अनुभव
- प्रतिरोध की चेतना
- सामाजिक न्याय की माँग
- अम्बेडकरवादी विचारधारा

यह विमर्श सौंदर्य की पारंपरिक अवधारणा को अस्वीकार करता है और जीवन की सच्चाई को प्राथमिकता देता है। इसमें भाषा भी सीधी, तीखी और अनुभवजन्य होती है।

5. दलित विमर्श के सैद्धान्तिक आधार
5.1 डॉ. भीमराव अम्बेडकर का विचार
डॉ. अम्बेडकर दलित विमर्श के वैचारिक आधार स्तंभ हैं। उन्होंने जाति-व्यवस्था को सामाजिक बुराई नहीं, बल्कि मानवता के विरुद्ध अपराध माना। उनका मानना था कि सामाजिक समानता के बिना राजनीतिक स्वतंत्रता अधूरी है।

अम्बेडकर का विचार साहित्य में चेतना, प्रतिरोध और आत्मसम्मान के रूप में प्रकट होता है। दलित साहित्यकार उनके विचारों से प्रेरणा लेकर साहित्य को सामाजिक परिवर्तन का माध्यम बनाते हैं।

5.2 मार्क्सवाद और दलित विमर्श
दलित विमर्श और मार्क्सवाद के बीच समानता और भिन्नता दोनों हैं। दोनों ही शोषण के विरुद्ध हैं, किंतु जहाँ मार्क्सवाद वर्ग-संघर्ष पर आधारित है, वहीं दलित विमर्श जातिगत शोषण को केंद्र में रखता है।

कुछ आलोचकों का मानना है कि दलित विमर्श वर्ग-संघर्ष को गौण कर देता है, जबकि दलित चिंतक मानते हैं कि भारत में वर्ग से पहले जाति का प्रश्न है।

5.3 अस्मिता विमर्श
दलित विमर्श अस्मिता विमर्श का अभिन्न अंग है। इसमें दलित अपनी पहचान स्वयं निर्धारित करता है। यह पहचान पीड़ित होने की नहीं, बल्कि संघर्षशील होने की है। साहित्य में यह अस्मिता आत्मकथाओं, कविताओं और कहानियों में स्पष्ट दिखाई देती है।

6. हिन्दी साहित्य और दलित प्रश्न
हिन्दी साहित्य लंबे समय तक सवर्ण दृष्टिकोण से लिखा गया। प्रेमचंद जैसे यथार्थवादी लेखक ने दलित जीवन को स्थान दिया, परंतु उनका दृष्टिकोण सहानुभूतिपूर्ण था, आत्मानुभूति पर आधारित नहीं।

दलित विमर्श का मूल आग्रह यह है कि दलित साहित्य वही है जिसे दलित स्वयं लिखे। बाहरी दृष्टि दलित अनुभवों की गहराई को नहीं समझ सकती।

इस बिंदु पर हिन्दी साहित्य में बड़ा परिवर्तन आया। साहित्य अब केवल सौंदर्य या मनोरंजन का साधन नहीं रहा, बल्कि सामाजिक संघर्ष का दस्तावेज बन गया।

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक1, जनवरी - मार्च 2025

1. भक्तिकाल और दलित चेतना के प्रारम्भिक स्वर

हिन्दी साहित्य के इतिहास में भक्तिकाल वह कालखंड है जहाँ पहली बार दलित चेतना के स्पष्ट स्वर सुनाई देते हैं। यद्यपि उस समय 'दलित विमर्श' जैसा कोई संगठित वैचारिक ढाँचा मौजूद नहीं था, फिर भी सामाजिक समानता, जाति-विरोध और मानवीय गरिमा की अभिव्यक्ति भक्त कवियों की वाणी में दिखाई देती है।

1.1 संत कबीर और जाति-विरोध

कबीर हिन्दी साहित्य के पहले ऐसे कवि हैं जिन्होंने जाति-व्यवस्था पर सीधा प्रहार किया। उनकी वाणी में ब्राह्मणवाद, कर्मकाण्ड और सामाजिक ऊँच-नीच का तीखा विरोध मिलता है—

"जाति न पूछो साधु की, पूछ लीजिये ज्ञान।"

कबीर स्वयं जुलाहा समुदाय से थे, इसलिए उनका अनुभव प्रत्यक्ष था। उन्होंने धार्मिक और सामाजिक दोनों स्तरों पर दलितों के शोषण को उजागर किया। कबीर की कविता में जो विद्रोह दिखाई देता है, वही आगे चलकर दलित विमर्श का वैचारिक आधार बनता है।

1.2 संत रैदास: समता और मानवीय गरिमा

संत रैदास, जो चर्मकार जाति से थे, ने अपने काव्य में समानता, करुणा और न्याय की बात की। उनका 'बेगमपुरा' एक ऐसे समाज की कल्पना है जहाँ कोई ऊँच-नीच नहीं—

"ऐसा चाहूँ राज मैं, जहाँ मिले सबन को अन्न।"

रैदास की चेतना दलित समाज के आत्मसम्मान और अधिकार की आकांक्षा को अभिव्यक्त करती है। यह दलित विमर्श का एक आदर्शवादी रूप है।

1.3 भक्तिकाल की सीमाएँ

हालाँकि भक्तिकाल में दलित चेतना के स्वर मिलते हैं, लेकिन इसे पूर्ण दलित विमर्श नहीं कहा जा सकता। कारण यह है कि—

- यह चेतना आध्यात्मिक थी, सामाजिक क्रांति तक सीमित नहीं पहुँची
- जाति-व्यवस्था पर वैचारिक प्रहार तो हुआ, पर सामाजिक संरचना नहीं बदली
- आत्मकथात्मक यथार्थ का अभाव था

फिर भी, यह काल दलित विमर्श की वैचारिक पृष्ठभूमि तैयार करता है।

2. रीतिकाल और दलित यथार्थ का अभाव

रीतिकाल हिन्दी साहित्य का वह दौर है जहाँ श्रृंगार, सौंदर्य और दरबारी संस्कृति प्रमुख रही। इस काल में साहित्य समाज की यथार्थ समस्याओं से कट गया।

दलित जीवन, पीड़ा और संघर्ष रीतिकालीन साहित्य से लगभग अनुपस्थित हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि—

- साहित्य राजाश्रय और सामंती संस्कृति पर आधारित था
- कवि समाज के उच्च वर्ग से आते थे
- दलित समाज की समस्याएँ 'असाहित्यिक' मानी गईं

इस प्रकार रीतिकाल दलित चेतना के विकास में एक अवरोधक काल सिद्ध हुआ।

3. आधुनिक काल और सामाजिक चेतना का उदय

आधुनिक काल में हिन्दी साहित्य ने सामाजिक यथार्थ की ओर ध्यान देना शुरू किया। यह काल दलित विमर्श के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है।

3.1 भारतेन्दु युग

भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने सामाजिक सुधार, शिक्षा और नवजागरण पर बल दिया। हालाँकि दलित प्रश्न उनके साहित्य में केंद्रीय नहीं है, फिर भी सामाजिक असमानता के प्रति जागरूकता दिखाई देती है।

3.2 द्विवेदी युग

महावीर प्रसाद द्विवेदी के नेतृत्व में हिन्दी साहित्य में नैतिकता और सामाजिक सुधार का आग्रह बढ़ा। इस काल में—

- अस्पृश्यता के विरुद्ध लेखन हुआ
- शिक्षा और समानता पर बल दिया गया

परंतु दलितों की आवाज़ अभी भी स्वयं दलितों की नहीं थी।

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक1, जनवरी - मार्च 2025

4. प्रेमचंद और दलित यथार्थ
प्रेमचंद हिन्दी साहित्य के पहले ऐसे लेखक हैं जिन्होंने दलित जीवन को गंभीरता से प्रस्तुत किया। उनकी कहानियाँ जैसे—
- *सद्गति*
- *ठाकुर का कुआँ*
- *कफन*

दलितों के शोषण, गरीबी और अमानवीय व्यवहार को उजागर करती हैं।

4.1 सहानुभूति बनाम स्वानुभूति

प्रेमचंद का दृष्टिकोण सहानुभूतिपूर्ण था, पर दलित विमर्श का मूल आग्रह 'स्वानुभूति' है। यही कारण है कि दलित आलोचक प्रेमचंद को दलित साहित्यकार नहीं मानते, बल्कि दलित विषयों पर लिखने वाला सवर्ण लेखक मानते हैं।
फिर भी, यह स्वीकार करना होगा कि प्रेमचंद ने हिन्दी साहित्य को दलित यथार्थ से परिचित कराया।

5. स्वतंत्रता आंदोलन और दलित चेतना
स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान दलित प्रश्न राष्ट्रीय विमर्श का हिस्सा बना। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने—

- अस्पृश्यता का विरोध किया
- शिक्षा और राजनीतिक अधिकारों की माँग की
- संविधान के माध्यम से सामाजिक न्याय की स्थापना की

इस दौर में दलित चेतना साहित्य के लिए तैयार भूमि बन चुकी थी।

6. स्वतंत्रता के बाद दलित साहित्य का उदय
स्वतंत्रता के बाद दलित साहित्य एक संगठित आंदोलन के रूप में सामने आया। इसके प्रमुख कारण थे—

- संवैधानिक अधिकार
- शिक्षा का प्रसार
- अम्बेडकरवादी विचारधारा
- सामाजिक आंदोलनों का प्रभाव

दलित लेखक अब स्वयं अपनी कहानी लिखने लगे।

7. दलित साहित्य बनाम मुख्यधारा साहित्य
दलित साहित्य और मुख्यधारा साहित्य के बीच मूलभूत अंतर हैं—

मुख्यधारा साहित्य	दलित साहित्य
सौंदर्य-बोध पर आधारित	यथार्थ और संघर्ष पर आधारित
सहानुभूति	स्वानुभूति
सवर्ण दृष्टिकोण	दलित दृष्टिकोण
मनोरंजन और कलात्मकता	सामाजिक परिवर्तन

दलित साहित्य साहित्य की परंपरागत परिभाषा को चुनौती देता है।

8. Phase–2 का निष्कर्ष
इस चरण में यह स्पष्ट हुआ कि हिन्दी साहित्य में दलित चेतना का विकास एक दीर्घ ऐतिहासिक प्रक्रिया है। भक्तिकाल से लेकर स्वतंत्रता के बाद तक दलित स्वर धीरे-धीरे मुखर होते गए। स्वतंत्रता के बाद दलित साहित्य ने हिन्दी साहित्य को नई दिशा, नई भाषा और नया उद्देश्य दिया।

1. दलित आत्मकथा : स्वानुभूति का प्रामाणिक दस्तावेज
दलित साहित्य में आत्मकथा सबसे सशक्त और प्रामाणिक विधा मानी जाती है। इसका कारण यह है कि दलित जीवन का यथार्थ बाहर से नहीं, बल्कि भीतर से व्यक्त होता है। आत्मकथा दलित विमर्श में 'स्वानुभूति' का सर्वोच्च उदाहरण है।

शरणकुमार लिंबाले के अनुसार—
"दलित आत्मकथा दलित जीवन का सामूहिक दस्तावेज होती है।"

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक1, जनवरी - मार्च 2025

दलित आत्मकथाएँ व्यक्तिगत पीड़ा तक सीमित नहीं रहतीं, बल्कि पूरे समाज की त्रासदी को अभिव्यक्त करती हैं।

2. प्रमुख दलित आत्मकथाएँ और उनका विश्लेषण

2.1 ओमप्रकाश वाल्मीकि: 'जूठन'

'जूठन' हिन्दी की सर्वाधिक चर्चित दलित आत्मकथा है। इसमें लेखक ने अपने बचपन से लेकर वयस्क जीवन तक के अनुभवों को अत्यंत निर्भीकता से प्रस्तुत किया है।

इस आत्मकथा में—

- स्कूल में भेदभाव
- सामाजिक अपमान
- आर्थिक शोषण
- मानसिक यातना

का यथार्थ चित्रण मिलता है। 'जूठन' दलित विमर्श को भावुकता से निकालकर वैचारिक प्रतिरोध में बदल देती है।

2.2 तुलसीराम: 'मुर्दहिया' और 'मणिकर्णिका'

तुलसीराम की आत्मकथाएँ शिक्षा के माध्यम से दलित चेतना के विकास को दर्शाती हैं। 'मुर्दहिया' में गाँव का दलित जीवन और 'मणिकर्णिका' में शहर का अनुभव चित्रित है।

यह आत्मकथाएँ बताती हैं कि—

- शिक्षा मुक्ति का साधन है
- जाति-व्यवस्था शहरों में भी उतनी ही क्रूर है

2.3 शरणकुमार लिंबाले : 'अक्करमाशी'

यद्यपि यह मराठी मूल की आत्मकथा है, पर हिन्दी में इसका प्रभाव गहरा है। लिंबाले ने दलित आत्मकथा को सैद्धान्तिक आधार भी दिया।

उनके अनुसार दलित आत्मकथा—

- विद्रोह की चेतना
- आत्मसम्मान की खोज
- सामाजिक परिवर्तन की आकांक्षा

का साहित्य है।

3. दलित कविता: प्रतिरोध और अस्मिता की अभिव्यक्ति

दलित कविता सौंदर्य-बोध से अधिक संघर्ष-बोध की कविता है। इसमें भाषा सीधी, आक्रामक और अनुभवजन्य होती है।

3.1 दलित कविता की विशेषताएँ

- आक्रोश और विद्रोह
- आत्मसम्मान की चेतना
- जातिगत उत्पीड़न का यथार्थ
- अम्बेडकरवादी दृष्टि

3.2 प्रमुख दलित कवि

(क) नामदेव ढसाल

नामदेव ढसाल की कविताएँ दलित क्रोध और विद्रोह का तीव्र रूप हैं। उनकी कविता व्यवस्था को चुनौती देती है।

(ख) ओमप्रकाश वाल्मीकि

वाल्मीकि की कविताएँ सामाजिक अन्याय के विरुद्ध चेतावनी हैं। उनकी कविता में करुणा नहीं, सवाल हैं।

(ग) सुशीला टाकभौरे

दलित स्त्री कविता में सुशीला टाकभौरे का विशेष स्थान है। उनकी कविताएँ दलित और स्त्री दोनों अस्मिताओं को सामने लाती हैं।

4. दलित कहानी: यथार्थ का सघन चित्रण

दलित कहानी हिन्दी कथा साहित्य में एक नया मोड़ है। इसमें दलित जीवन के सूक्ष्म और जटिल पक्ष उभरते हैं।

अमृत काल
अंतर्राष्ट्रीय विशेषज्ञ समीक्षित एवं स्वीकृत शोध पत्रिका
ISSN: 3048-5118, खंड3, अंक1, जनवरी - मार्च 2025

4.1 विषय-वस्तु
- छुआछूत
- गरीबी
- सामाजिक हिंसा
- प्रशासनिक अन्याय

4.2 प्रमुख कथाकार

- ओमप्रकाश वाल्मीकि
- मोहनदास नैमिशराय
- जयप्रकाश कर्दम

इनकी कहानियाँ व्यवस्था की क्रूरता को उजागर करती हैं।

5. दलित उपन्यास: सामाजिक संरचना की आलोचना
दलित उपन्यास व्यापक सामाजिक परिप्रेक्ष्य में दलित जीवन को प्रस्तुत करता है।

5.1 प्रमुख उपन्यास
- *धरती धन न अपना* (जगदेव सिंह)
- *आवरण* (मंजुल भारद्वाज)
- *अछूत* (विवेकानंद)

इन उपन्यासों में जाति-व्यवस्था को एक संस्थागत अपराध के रूप में देखा गया है।

6. दलित स्त्री विमर्श
दलित विमर्श के भीतर दलित स्त्री विमर्श एक अलग और अधिक जटिल विमर्श है। दलित स्त्री—
- सवर्ण पुरुष से शोषित
- दलित पुरुष से उपेक्षित

रही है।

दलित स्त्री लेखन में—
- दोहरा शोषण
- यौन हिंसा
- सामाजिक चुप्पी

का यथार्थ सामने आता है।

7. भाषा और शिल्प
दलित साहित्य की भाषा—
- बोलचाल की
- अनुभवजन्य
- अलंकारहीन

होती है। यह साहित्य शिल्प से अधिक सत्य पर बल देता है।

संदर्भ सूची

[1]. अम्बेडकर, डॉ. भीमराव – *जाति का विनाश*, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली।
[2]. अम्बेडकर, डॉ. भीमराव – *शूद्र कौन थे?*, सम्यक प्रकाशन, नई दिल्ली।
[3]. अम्बेडकर, डॉ. भीमराव – *अछूत कौन और क्यों?*, सम्यक प्रकाशन।
[4]. लिंबाले, शरणकुमार – *दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र*, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
[5]. कंवल भारती – *दलित विमर्श की भूमिका*, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली।
[6]. धर्मवीर – *दलित विमर्श और हिन्दी साहित्य*, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
[7]. मोहनदास नैमिशराय – *दलित साहित्य का इतिहास*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
[8]. ओमप्रकाश वाल्मीकि – *दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र*, राधाकृष्ण प्रकाशन।
[9]. वाल्मीकि, ओमप्रकाश – *जूठन*, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली।
[10]. तुलसीराम – *मुर्दहिया*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।

[11]. तुलसीराम – *मणिकर्णिका*, राजकमल प्रकाशन।
[12]. कौशिक, कौशल्या बैसंत्री – *दोहरा अभिशाप*, साहित्य अकादमी।
[13]. लिंबाले, शरणकुमार – *अक्करमाशी* (हिन्दी अनुवाद), वाणी प्रकाशन।
[14]. वाल्मीकि, ओमप्रकाश – *सलाम*, कहानी संग्रह, राधाकृष्ण प्रकाशन।
[15]. नैमिशराय, मोहनदास – *आज बाजार बंद है*, राजकमल प्रकाशन।
[16]. जयप्रकाश कर्दम – *छप्पर*, वाणी प्रकाशन।
[17]. ढसाल, नामदेव – *गोलपीठा* (कविता संग्रह), हिन्दी अनुवाद।
[18]. सुशीला टाकभौरे – *क्योंकि मैं लड़की हूँ*, कविता संग्रह।
[19]. मंजुल भारद्वाज – *आवरण*, उपन्यास, वाणी प्रकाशन।
[20]. शुक्ल, रामचंद्र – *हिन्दी साहित्य का इतिहास*, नागरी प्रचारिणी सभा।
[21]. नगेन्द्र – *आधुनिक हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ*, नेशनल पब्लिशिंग हाउस।
[22]. नामवर सिंह – *कविता के नए प्रतिमान*, राजकमल प्रकाशन।
[23]. बच्चन सिंह – *हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास*, राधाकृष्ण प्रकाशन।
[24]. दूधनाथ सिंह – *साहित्य और समाज*, वाणी प्रकाशन।
[25]. *हंस* (विशेषांक: दलित विमर्श), नई दिल्ली।
[26]. *समकालीन भारतीय साहित्य* (दलित साहित्य विशेषांक), साहित्य अकादमी।
[27]. *आलोचना* पत्रिका – दलित विमर्श विशेषांक।
[28]. *तद्भव* – दलित साहित्य पर केंद्रित अंक।
[29]. फुले, ज्योतिबा – *गुलामगिरी*, हिन्दी अनुवाद।
[30]. कंवल भारती – *दलित साहित्य का समाजशास्त्र*, फारवर्ड प्रेस।